AN ANALYTICAL STUDY OF THE WORKS OF POET KEDARNATH SINGH WITH SPECIAL REFERENCE TO ECOLOGY

कवि केदारनाथ सिंह की कविताओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन : पारिस्थितिकी के विशेष संदर्भ में

डॉ. पूर्णिमा आर.

सहायक प्रोफेसर

पर्योजना कार्य का सारांश

मानव सृष्टि के प्रारंभ से ही विकास कर रहा है। उसके विकास का, आस-पास के वातावरण पर सीधा प्रभाव पडता है। "क्षिति जल पावक गगन समीरा, पंचतत्व मिल बना सरीरा" वाली उक्ति इस बात की पुष्टी करती है। ये तत्व जहाँ एक ओर मनुष्य के विकास को प्रभावित करते हैं वहीं दूसरी तरफ मनुष्य को पृथ्वी पर सबसे सफल प्राणी घोषित करते हैं। मानव जाति का अस्तित्व पर्यावरण पर निर्भर है। पर्यावरण की किसी भी प्रकार की उपेक्षा वास्तव में अस्तित्व की उपेक्षा ही है।

पर्यावरण के प्रति भारतीय आदिकाल से ही सचेत रहे हैं। वैदिक काल से ही तत्वदर्शी तपस्वियों ने मानव-कल्याण के लिए पर्यावरण को सर्वाधिक महत्व दिया है। हमारे ऋषि-मुनियों ने प्रकृति के गूढ़ रहस्यों को जानने का प्रयास किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यह सृष्टि पंचमहाभूतों से बनी है और इन पंचतत्वों के बीच संतुलन की अवस्था है। किसी भी प्रकार की न्यूनाधिकता के कारण यह संतुलन बिगड सकता है। असंतुलन पृथ्वी के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। संतुलित अवस्था को बनाए रखने के लिए वैदिक ऋषियों ने प्राकृतिक पूजा प्रारंभ की। उन्होंने समस्त प्राकृतिक शक्तियों की महिमा का गान किया। इसका मानना था कि समस्त देवी-देवताओं के स्वरूप के मूल में प्राकृतिक शक्तियाँ है। उसी प्रकार वेदों में पेड-पौधों और वृक्षों को मानव जीवन का अभिन्न

हिस्सा माना गया है। इनके संरक्षण के लिए प्रत्येक वृक्ष को किसी न किसी देवता से संबद्ध कर सुरक्षा प्रदान की गई है। उनका काट जाना पाप माना गया। उसी प्रकार पशुओं और वन्य जीवधारियों के संरक्षण की दृष्टि से इन्हें भी देवी देवताओं से संबद्ध किया गया। ऋग्वेद में पशु पक्षियों को देवी-देवताओं के वाहन के रूप में दर्शाया गया। इस प्रकार प्राचीन भारतीय संस्कृति में स्थल मण्डल, जल मण्डल और जैव मण्डल को संरक्षण प्राप्त था और धार्मिक भावनाओं से जोडकर रखा गया था। इनका नाश अधर्म और पाप माना गया। लोग अधर्म और पाप के भय से पर्यावरण की रक्षा करते थे।

आज भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व में पर्यावरण संकट दृष्टिगोचर हो रहा है। पर्यावरण को दूषित करने वाले घटक है - शहरीकरण, जनसंख्या विस्फोट, वनों की कटाई, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, कूडा-कचरा और अपशिष्ट पदार्थों का अनियोजित ढंग से फेंका जाना, विषैले कीटनाशी रसायनों का प्रयोग, जैव विविधता की कमी, आवासीय सुविधाओं के विकास के लिए जमीन का प्रयोग, उत्खनन, तकनीकी विकास और उपयोग, इ-कचरा, वैश्विक ऊष्मीकरण, ओजोन परत का निम्नीकरण, प्रकृति में जैविक विषमता, सौर ऊर्जा का प्रकोप, ऊर्जा की अधिक खपत, बाज़ारीकरण, जलवायु परिवर्तन, जीनांतरित फसलें आदि। मानव का स्वार्थ, भौतिकवाद, विज्ञानवाद, प्रतिस्पर्धा और प्रसिद्धि प्राप्ति की लालसा पर्यावरण को प्रदूषित और असंतुलित करते हैं। इसके साथ ही सामाजिक प्रदूषण, सांस्कृतिक प्रदूषण, आध्यात्मिक प्रदूषण, मानसिक प्रदूषण, बढ़ता अपराधीकरण, बीमारियों का बढ़ना, प्राकृतिक आपदाएँ आदि मानव जीवन को बरबाद कर रहे हैं। पर्यावरणीय असंतुलन की क्षतिपूर्ति के लिए कोई उपाय नहीं किया जाता और इसका दुष्परिणाम सजीव और निर्जीव सृष्टि को भुगतने पड रहे हैं।

पारिस्थितिकी जीव विज्ञान की एक शाखा है जिसमें, जैविक-अजैविक कारकों और उनके पर्यावरण के बीच संबंधों का अध्ययन करते हैं। संपूर्ण जैव मंडल का अस्तित्व

पारिस्थितिकी पर निर्भर है। सभ्यता के विकास के कारण पूरे विश्व में प्रकृति के साथ खिलवाड हो रहा है। हरे भरे खेत खलिहान तेजी से कंकरीढ के जंगलों में परिवर्तित होते जा रहे हैं। मानव प्रकृति के उपादानों का जी भर कर दोहन कर रहा है। उनमें संरक्षण के बदले क्षरण हो रहा है। पारिस्थितिकी विज्ञान होने के कारण प्रकृति की चीत्कार सिर्फ वैज्ञानिकों को ही अधिक सुनाई पड रही थी। इसलिए इस चीत्कार को आम जनता तक पहुँचाने के लिए साहित्य का सहारा किया गया क्योंकि साहित्य जीवन और दिल के ज्यादा करीब है और आम जनता की भी इसमें रुचि है। इस प्रकार पारिस्थितिकी विज्ञान ने साहित्य में पारिस्थितिक विमर्श के रूप में पादार्पण किया।

प्राचीन भारत में 'वेदे सर्वं प्रतिष्ठितम्' मानकर वेदों के अनुसार जीवन चर्या का अनुष्ठान किया करते थे। वेद, पर्यावरण चिंतन और चेतना के प्रणेता है। पर्यावरण के संरक्षण की आधारभूत अवधारणाएँ वेदों में प्रस्फुटित हुई है। जीव-जंतु, पेड-पौधे, वनस्पतियाँ और औषधियाँ वातावरण को संतुलित रखने में अपना योगदान देती हैं। यदि इनमें से कोई भी तत्व प्रदूषित होता है, तो जीव जगत पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है। प्राचीन भारतीयों ने अपनी प्रज्ञा से कई ऐसी योजनाएँ बनाई जो आगे चलकर पर्यावरण संरक्षण के लिए सहायक बनी।

केदारनाथ सिंह प्रकृति का कवि माना जाता है। उनकी कविताएँ प्रकृति, पर्यावरण और पारिस्थितिकी के इर्द-गिर्द घूमती है। कई कविताएँ पर्यावरण असंतुलन पर है, प्रदूषण पर है। केदारनाथ जी ने 'तीसरा सप्तक और अभी बिलकुल अभी' में प्रकृति के नैसर्गिक रूप को चित्रित किया है। जमीन पक रही है में सैद्धांतिक पारिस्थितिकी का चित्रण मिलता है। साथ ही सांस्कृतिक और सामाजिक पारिस्थितिकी की झलक भी मिलती है। 'अकाल में सारस' और 'यहाँ से देखो' काव्य संग्रहों में पारिस्थितिकी के चित्रण के साथ-साथ पर्यावरण संकट और असंतुलन के चित्र मिलते हैं। बाघ, उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ,

तालस्ताय और साइकिल आदि में विकास के कारण उत्पन्न पारिस्थितिक संकट और असंतुलित होते पर्यावरण पर गहरी चिंता व्यक्त की गई है। कविता को अधिक, संप्रेषणीय और समकालीन बनाने के लिए केदारनाथ सिंह प्रकृति का आलंबन लेते हैं। स्वप्निल श्रीवास्तव जी ने सच ही कहा है "प्रकृति उनकी कविता में शक्ति केन्द्र के रूप में उपस्थित है। यह प्रकृति उनके काव्य जगत में लोकजीवन एवं संस्कृति के निकट है। उनकी कविताओं में जानवर और पक्षी अपनी पूरी गरिमा और स्नेह शक्ति के साथ विराजमान है। उनके यहाँ 'जमीन', 'रोटी', 'बैल', 'बारिश', 'जानवर', 'गधा', 'घोडा' वनस्पतियाँ काव्य विषय बनकर आते हैं। इन विषयों पर केदार ने सफल कविताएँ लिखी हैं, चूँकि कवि की जडें ग्रामीण जीवनानुभव में है। फलस्वरूप ये कविताएँ अपनी सहजता और स्वाभाविकता में श्रेष्ठ कविताएँ हैं।"

केदारनाथ सिंह ने अपनी कविताओं में मानव-मानव और मानव-प्रकृति का आपसी रिश्ता दर्शाया है। वे आधुनिक हिन्दी कवियों में सर्वाधिक तीक्ष्ण संवेदना के कवि माने जाते हैं। उनकी कविताओं में जीवन का हल्का सा स्पंदन भी रेखांकित होता चलता है। उन्होंने कम होते घोडों, विस्मृति में जाते पक्षियों, व्यस्तता में खोते जाते साथियों पर कविताएँ रची है। उनमें यथार्थ जीवन की जमीन पर चलती कल्पना और बिंबों के साथ विचारों का संगठन दिखाई देता है। मानवीय शक्तियों के प्रति कवि की अविचल आस्था कविताओं में दर्शनीय है। साधारण शब्दों के प्रयोग से विशिष्ट संदर्भ आंकते हैं जैसे - उस आदमी को देखो, पानी से घिरे हुए लोग, जाते हुए आदमी का बयान, शीत लहरी में एक बूढ़े आदमी की प्रार्थना, टमाटर बेचनेवाली बुढिया, जो एक स्त्री को जानता है, मैदान में बच्चे। इस प्रकार उनकी कविताएँ बहुजीवन की छबि प्रस्तुत करती है और मानवीय शक्तियों के प्रति कवि की अविचल आस्था के और घनीभूत होने का प्रमाण देती है। विष्णु खरे 'आलोचना की पहली किताब' में बताते है कि छोटी छोटी चीजों, इनसानी गनीमती

के महसूस किए हुए चित्रों से वे आदमी और आदमी के बीच के रिश्तों को स्पष्ट करते हैं। (पृ. 98) मानव-मानव के बीच का रागात्मक संबंध उन्होंने गहरी रुचि के साथ अंकित किया है। साथ ही उन्होंने कोमल मानवीय संवेदनाओं को भी कविताओं में पिरोया है। इसीलिए उन्हें 'राग विह्वल क्षणों का अप्रतिम कवि' कहा जाता है। मानव-मानव के बीच रागात्मक संवेदना के तार झंकृत कर भावात्मक एकता के लिए हमेशा प्रयत्नरत रहे हैं।

कवि केदारनाथ सिंह ने अपनी कविताओं में जो मूल्य चित्रित किए हैं, वे पारिस्थितिक चिंतन के अनुरूप ही है। इन मूल्यों के जरिए मानव समाज में पर्यावरण संबंधी जागरूकता बढ़ी है और लोग पर्यावरण, पारिस्थितिकी और पारिस्थितिक संकट की ओर अधिक सजग हुए हैं। उनकी परवर्ती रचनाएँ पारिस्थितिक संकट को गहराई और संवेदनशीलता से दर्शाती है।

कवि केदारनाथ सिंह ने प्रकृति को अलग-अलग तरह से कविताओं में स्थान दिया है। सैद्धांतिक पारिस्थितिकी को अपनी कविताओं के जरिए दिखाने की कोशिश की है। सामाजिक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पारिस्थितिकी किस प्रकार प्रकृति पर प्रभाव छोडती है, इसका चित्रण कवि ने किया है। केदारजी प्राचीन भारतीय चिंतन पद्धति से प्रभावित थे इसलिए गहन पारिस्थितिकी का अंकन रचनाओं में दिखाया है। सतही पारिस्थितिकी का अधिक चित्रण नहीं आया है। दरअसल केदार की कविताओं में गहन पारिस्थितिक दर्शन की झलक अधिक मिलती है और सतही पारिस्थितिकी की मात्रा बहुत कम। कवि की ओर से गहन से सतही पारिस्थितिकी की ओर झुकाव दिखाई नहीं देता। प्रकृति उनके लिए अलग से देखा जानेवाला अनुभव संसार नहीं है। परिवेश और मनुष्य के रिश्ते की 'हारमनी' ढूँढने का ज़रिया है।

मानव संस्कृति प्रकृति की गोद में पली बढी है। इसलिए उसपर पारिस्थितिकी का प्रभाव पडना स्वाभाविक है। भारतीय संस्कृति और सभ्यता वनों से ही आरंभ हुई। इस

संस्कृति को आरण्य संस्कृति भी कहा जाता है। वनों में ही भारतीय ऋषिमुनियों, दार्शनिकों, संतों और मनीषियों ने लोकमंगल के लिए चिंतन मनन किया। वेद, वेदांत, उपनिषद् आदि वनों में ही रचे गए। प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों का चित्रण वेद, उपनिषद और पुराणों में मिलता है। भारतीय संस्कृति में वृक्षों और नदियों की जितनी महिमा का उल्लेख किया गया है, उतना और किसी देश में शायद ही मिलता हो। सदियों से ही ऋषि मुनियों ने वृक्षों और नदियों में देवत्व और दिव्यत्व का अनुभव किया। उनके अनुसार प्रत्येक, पेड, पौधा, वनस्पति, वृक्ष, नदी जल स्रोत आदि में अनुपम शक्ति और रहस्य छिपा हुआ है। इसी का आख्यान वेदों, उपनिषदों, पुराणों, शास्त्रों, लोकविश्वासों परंपराओं में अनेक रूपों में दृष्टिगोचर होता है। मनुष्य स्वास्थ्य का पूरा व्यौरा आयुर्वेद में प्राप्त है जो पूर्णतः प्रकृति पर आधारित है। आयुर्वेद के आचार्यों के अनुसार विश्व में ऐसी कोई वनस्पति ही नहीं है जो औषध गुणों से युक्त न हो। मनुष्य हवा के लिए, पानी के लिए, आहार के लिए, रहन-सहन के लिए, दवाई के लिए, कपडों के लिए प्रकृति पर आश्रित है। इसीलिए कहा जाता है कि मानव संस्कृति पारिस्थितिकी से अंतरसंबंधित है।

केदारनाथ सिंह की कविताओं में सांस्कृतिक पारिस्थितिकी की झलक मिलती है। केदारनाथ जी का मानना है कि प्रकृति मानव के साथ इस प्रकार जुडी हुई है कि दोनों को एक दूसरे से अलग किया ही नहीं जा सकता। कवि मनुष्य और पेडों को सगोत्रज मानते हैं। "पता लगा लो / दरख्तों की छाल / और हमारी त्वचा का गोत्र / एक ही है।" कवि का मानना है "हमीं से फूटकर / हमारी बगल में चुपचाप बहती हुई नदियाँ।" जब प्रकृति के पेड और नदियाँ मनुष्य के सगोत्रज है तो उन्हें अलग करना संभव ही नहीं है। परंपरा से चली आती हुई हमारी भारतीय संस्कृति पारिस्थितिकी के साथ रागात्मक रूप से जुडी हुई है। संस्कृति के उपादान पर्व, त्यौहार, खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार सब प्राकृतिक परिवेश और मौसम के अनुसार है। ऋतुओं के बदलने पर खास प्रकार का पर्व

मनाया जाता है। उसके खान-पान, रीति रिवाज़ सब उस ऋतु पर निर्भर है। उस मौसम में जो खाद्य पदार्थ उपलब्ध होते हैं, उसी को पकाया जाता है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति संपूर्ण रूप से पारिस्थितिकी पर निर्भर है। 'पर्व स्नान', 'बनारस' जैसी कविताओं में कवि ने इसका इशारा किया है।

मनुष्य और उसके पर्यावरण के बीच आदिकाल से चल रही अंतर्क्रिया के फलस्वरूप कालान्तर में पर्यावरण का ह्रास आरंभ हुआ। आज स्थिति यह है कि पर्यावरण भयानक संकट के दौर से गुजर रहा है। युनेस्को ने अपने एक प्रलेख 'थिंकिंग अहेड' में पर्यावरण संकट को मानव सभ्यता का संकट घोषित किया है। मानव के क्रियाकलाप प्राकृतिक लोक पर अपना प्रभाव छोडते हैं। यही कारण है कि पर्यावरण संकट सबसे महत्वपूर्ण और आग्रही समस्या बनकर मानव राशि के सामने खडी है।

केदारनाथ सिंह की कविताओं का अध्ययन करने से पता चलता है कि कवि ने लगातार लोक धरातल की ओर संक्रमण किया है। फलस्वरूप उनकी कविताओं में सामाजिक पारिस्थितिकी नई शक्ति के साथ प्रस्तुत हुई है। यहाँ से देखो, ज़मीन पक रही है, संकलन की अधिकांश कविताएँ लोक जीवन और सामाजिकता के करीब है। इनमें कवि की लोक चेतना और सामाजिक चेतना मुखर हुई है। कवि ने इन कविताओं के जरिए सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव प्राकृतिक वातावरण पर किस हद तक पडता है, यह दिखाने की कोशिश की है।

पर्यावरण की भव्यता और सुन्दरता मानव पर आश्रित है और मनुष्य का जीवन पर्यावरण पर। मानव और प्रकृति का प्रगाढ़ संबंध एक दूसरे के प्रति प्रेम और संवेदना का संदेश देता है। मानव के जीवन यापन के लिए जैविक संसाधनों का सुलभ होना अनिवार्य है। मानव का 85 प्रतिशत भोज्य पदार्थ वनस्पतियों से और 15 प्रतिशत पशुओं से प्राप्त

होता है। मनुष्य की तरह पशु भी आहार के लिए वनस्पतियों पर निर्भर है। रोगों से ग्रसित होने पर उपचार के लिए जडी बूटियाँ थीं। प्राण वायु जीवधारियों के लिए अनिवार्य है। वह जीवधारियों को वनस्पतियों वर्ग से ही प्राप्त होती है। पेड-पौधों की रसास्वादन क्रिया में पृथ्वी से जल का अवशोषण किया जाता है। इसके साथ ही उनमें बाष्पोसर्जन भी होता है जो प्रदूषित पदार्थों को स्वच्छ बनाने में सहायक है और वातावरण को भी स्वास्थ्य वर्धक बनाते हैं। इसीलिए वनस्पति को 'अस्तित्व का साधन' माना गया है और पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में उनका प्रमुख योगदान है।

सभ्यता के विकास के कारण वन और जल स्रोत सिमटने लगे हैं। उनकी उपयोगिता का स्वरूप परिवर्तित होता जा रहा है। वनों को बेताहाशा काटा जाना, जनसंख्या की वृद्धि, बढती हुई आबादी को खाद्यान्न उपलब्ध करा सकने के लिए खेती को बढावा देना, इन सब का प्रभाव पर्यावरण पर पडता है। इस प्रकार देखे तो भौतिक संस्कृति को सबसे बडा कहर सर्वाधिक रूप में पर्यावरण पर ही बरपा है। आज वनों के नाम पर केवल उपवन, अभयारण्य और राष्ट्रीय उद्यान ही शेष रह गये हैं। मरुस्थलीकरण बढता जा रहा है फलस्वरूप सूखा, बाढ़, भू-अपरदन, भू-स्खलन और पर्यावरण असंतुलन को बल मिला है। पर्वतों और नदियों को अनदेखा कर बनाई गई सडकें, पुल, रेलवे पटरियाँ, वहनों द्वारा निरंतर उगलता धुआँ, कल-कारखानों से उगलते विषैले गैस आदि के कारण पर्यावरण प्रदूषण बढता जा रहा है। बाँध निर्माण के कारण नदियों में जल की मात्रा कम होने लगी फलस्वरूप नदियाँ सूखने लगी है और भूगर्भीय जल का स्तर भी निरंतर गिरता जा रहा है। प्रकृति अत्यंत उदार है लेकिन बहुत ताकतवर है। वह क्रूर व्यवहार को सहन नहीं कर पाती। जब उसका विदोहन किया जाता है वह प्रतिक्रिया करती है। इसलिए कवि केदारनाथ सिंह पाठकों को प्रकृति की ताकत क्या है अपनी कविता 'नदियाँ' द्वारा बताते हैं। बिना नाम की नदी, बनारस, पर्व स्नान, कुदाल, घर का विचार, सपने में पृथ्वी, उत्तर

कबीर, तुकें, ठंड में गौरया, तस्वीर, कुँए आदि कविताओं में विलुप्त होते प्राकृतिक संसाधनों, पक्षियों, मानवीय रिश्तों परंपराओं आदि का जिक्र करते हैं और मानव जाति को आगाह करते हैं कि ऐसा ही चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब मानव अपनी मानवीयता के साथ-साथ सब कुछ खो बैठेगा। "जब किसी के पास / ढोने के लिए नहीं कुछ होगा / सिवा अपने सिर के / तो कितनी खाली खाली / लगेगी दुनिया।" केदारनाथ जी अपनी कविताओं के ज़रिए बताना चाहते हैं कि प्रकृति का दोहन करने से पर्यावरण प्रदूषित होगा और मनुष्यता के कालग्रसित होने की संभावनाएँ बलवती होती रहेगी। मानव कल्याण को अपना सच्चा धर्म मानकर वातावरण को प्रदूषित होने से बचाये, यह पर्यावरण का सारभूत शाश्वत सत्य है।

मानव साक्षर बनकर बहुत बडी ऊँचाइयाँ हासिल कर चुका है। ऊँचाइयों को छूते वह इतना आगे बढ गया कि अपने अस्तित्व को ही भुला बैठा है। प्रकृति के साथ उसके रागात्मक संबंध छूट रहा है। वह अपने आप को सृष्टि का महत्वपूर्ण प्राणी मानने लगा है और सारी सृष्टि पर अपना आधिपत्य जमाने लगा है। अपनी इच्छा के अनुसार संपूर्ण सृष्टि को मुट्ठी में करना चाह रहा है। मनुष्य के इस मानसिक परिवर्तन को वैश्वीकरण ने और पुष्ट किया। वैश्वीकरण अर्थ तत्व की सुरक्षा देखता है। वैश्वीकरण के चलते मनुष्य सिर्फ अपना 'लाभ', अपनी सुविधा और अपनी सुरक्षा के बारे में सोचने लगा है। प्रकृति को देखने का उसका दृष्टिकोण बिलकुल ही बदल गया है।

पारिस्थितिकी संबंधी कई तत्व मानव के जीवन पर व्यापक प्रभाव डालते हैं। पहला है भौगोलिक तत्व। लोगों का रहन-सहन, खान-पान आदि भौगोलिक तत्वों पर निर्भर है। नदियाँ, पहाड, रेगिस्तान, जलवायु, खनिज आदि लोगों के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित करते हैं। गाँव से संबंध रखनेवाले, प्रकृति के अधिक निकट होते हैं और प्रकृति के साथ उनका रागात्मक संबंध भी अधिक है। शहरी लोग

ज्यादात्तर कर्मचारी और कामकाजी लोग होते हैं। उनका, प्रकृति के साथ तादात्म्य संबंध कम होता है। वैश्वीकरण ने गाँव तथा शहरी मानव को स्वार्थी बनाया। वह सिर्फ अपनी चिंता करता है। सहजीवियों की, पादपों की, पर्यावरण की उसे कोई चिंता है ही नहीं। औद्योगिकीकरण ने जनसंख्या में वृद्धि की है। इसके फलस्वरूप ग्रामीण जनसंख्या में कमी आई है और गाँव नगरों में तबदील हो रहे हैं। ग्रामवासी रोजगार की तलाश में शहरों में जाकर बस गये हैं। इस कारण शहरों में आवास की समस्या ने भीषण रूप ग्रहण किया है। श्रमिकों के लिए मकानों की कमी के कारण गंदी बस्तियों का विकास हुआ। गंदगी और जनसंख्या भार के कारण वहाँ की सामाजिक पारिस्थितिकी पर असर पडता है। कचरे की निपटान की समस्या है। नदियों में बढते हुए प्रदूषण की समस्या है। यही सब केदारनाथ सिंह ने अपनी कविताओं द्वारा दर्शाने की कोशिश की है।

औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण के कारण कृषि का यांत्रीकरण हुआ है। पहले कृषि परंपरागत आधार पर होती थी जिसका एक मात्र उद्देश्य जीवनयापन करना था। लेकिन वैश्वीकरण के कारण कृषि में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है। इसका स्वरूप व्यावसायिक हो गया है। अधिक से अधिक मुनाफा कमाना इसका ध्येय हो गया है। केदारनाथ जी ने कुदाल, दाने, बाजार भाव आदि कविताओं में इस सत्य को उद्‌घाटित करने का प्रयास किया है।

मानव-प्रकृति, मानव-मानव संबंध में परिवर्तन देखा जा रहा है। समूहवाद की भावना समाप्त होती जा रही है और व्यक्तिवाद की भावना में वृद्धि हो रही है। यह परिवार से लेकर अंतरराष्ट्रीय स्तर तक मजबूत बनती जा रही है। मानव प्रकृति से कट रहा है। मानव-मानव से कट रहा है। एक दूसरे के साथ अजनबी सा व्यवहार कर रहे हैं। संचार साधनों के विकास के कारण व्यक्ति अपने में ही सिकुड रहा है। न वह दूसरों की परवाह करना चाहता है, न करता है। पर्यावरण उसके लिए 'जीने का ज़रिया' मात्र है। मानव में

परार्थ वाद की भावना समाप्त होती जा रही है और स्वार्थवाद की भावना विकसित होती जा रही है। धर्म और संस्कृति में लोगों की रुचि कम होती जा रही है जिसके कारण सांस्कृतिक और अध्यात्मिक पारिस्थितिकी को ठेस पहुँची है। केदारनाथ सिंह ने अपनी कविताओं के माध्यम से यह सब दर्शाने का प्रयास किया है।

इस प्रकार देखा जाए तो केदारनाथ सिंह ने मानव और प्रकृति को जोडने का काम किया है। मानव-प्रकृति के बीच और मनुष्य-मनुष्य के भीतर रागात्मक संवेदना को झंकृत कर भावनात्मक एकता लोने की कोशिश की है। पर्यावरण और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए केदारनाथ सिंह ने अपनी कविताओं के माध्यम से भरपूर प्रयास किया है। पारिस्थितिकी के सैद्धांतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, अध्यात्मिक गहन आदि विविध स्वरूपों के विश्लेषण उनकी कविता के विषय रहे हैं। वैश्वीकरण के दूष्यों से जूझती पृथ्वी के लिए उनकी कविताएँ आशावादी दृष्टिकोण प्रदान करती है। मानव और प्रकृति के संबंध को उसके विभिन्न आयामों में जितना उन्होंने देखा, हिन्दी के किसी भी समकालीन कवि ने शायद ही देखा हो। आदमी की उपस्थिति के बिना प्रकृति एक बेजान और नैतिक मूल्यों से रहित वस्तु है। आदमी का मस्तिष्क ही बृहत्तर प्रकृति के विकास का वह हिस्सा है जो प्रकृति को अर्थ देता है। केदार जी की कविताओं में कहीं भी 'प्रकृति चित्रण' केवल प्रकृति चित्रण की अय्याशी के लिए नहीं है बल्कि प्रकृति उनके यहाँ हमेशा आदमी की विभिन्न भावनाओं और परिस्थितियों के जरिए देखी गई चीज है। प्रकृति उनके लिए मानव से पलायन नहीं है बल्कि परस्पर संतुलन और मित्रता की खोज है। उनके अनुसार आदमी के दिमाग में और समाज में जब तक मानव द्रोही तत्व रहेंगे तब तक प्रकृतिद्रोह एक विभीषिका बना रहेगा और शायद मानव की समाप्ति का कारण भी बनेगा। केदारनाथ के अनुसार प्रकृतिद्रोह मिटाना है तो पहले मानव-मन और मानव समाज को सही रास्ते पर लाना होगा। केदारनाथ सिंह की कविताएँ इसीलिए आदमी की आदमीयत की खोज उसमें गहरी आस्था और उसके प्रति अदम्य प्रतिबद्धता की कविताएँ है।